UGC Approved - 45554 **Sangeet Galaxy**
Vol. 7, Issue. 1 (January 2018) pp. 52-57 **ISSN: 2319-9695**

गीत : एक बहु-आयामी ललित विधा

शैलेन्द्र श्रीवास्तव
शोधार्थी,
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़.
Email: sks26jan1951@gmail.com

किसी भी देश की सभ्यता और संस्कृति के आधार-स्तंभ हैं उसकी ललित कलाएँ, अर्थात् साहित्य, संगीत, चित्रकला, मूर्तिकला एवं वास्तुकला. इनमे से प्रमुख दो ललित कलाओं, साहित्य और संगीत का समावेश किसी एक विधा में हो, तो ऐसी विधा को ललित कलाओं का सर्वोत्तम संगम माना जाएगा. ऐसी विधा है गीत.

गीत मूलतः काव्य और संगीत के संयोग-समायोजन से उत्पन्न एक चिरन्तर विधा है. आदिकाल से ही मानव अपनी संवेदनाओं और जीवन-संघर्षों को व्यक्त करने के लिये गीत का सहारा लेता रहा है. मनुष्य के सुख-दुःख एवं अन्य सभी प्रकार की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का गिने-चुने शब्दों में स्वर-साधना के अनुरूप चित्रण कर देना ही गीत है. जिस प्रकार उर्दू भाषा में अर्थप्रधान गीत 'गज़ल' की संज्ञा दी जाती है, उसी प्रकार हिंदी में अर्थप्रधान कविता को गीत कहा जाता है.

व्युत्पत्ति की द्रष्टि से गीत शब्द अंग्रेज़ी के लिरिक, लायर शब्द से जुड़ा हुआ है. मूलतः ग्रीक भाषा का लिरिक उस गेय भावसंयुत कविता का बोध कराता है जो लीरा (लूर) नाम की तंत्री-वाद्य के साथ गाई जाती थी. भारतीय संस्कृति में गीत की व्यापकता को देखते हुए उसे विभिन्न पहलुओं से परखने का प्रयास किया गया है.

साहित्य की दृष्टि से देखें तो हम पाते हैं कि भारतीय साहित्य में लिरिक से मेल खाती विधा मुक्तक है. मुक्तक का अर्थ है 'अपने आप में सम्पूर्ण' अथवा 'अन्य निरपेक्ष वस्तु होना'**.** मुक्तक कविता का वह प्रकार है जिसमे केवल एक ही पद या छंद, स्वतन्त्र रूप से किसी एक ही भाव, कथ्य या रस को प्रकट करता हो. इस तरह यह प्रबंध काव्य से अलग होता है.

मुक्तक काव्य की परंपरा भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से ही प्रारम्भ होती है. वैदिक परंपरा के उदाहरणों में वशिष्ट और नामदेव के सूक्त और भागवत पुराण का वेणुगीत विशेष रूप से उल्लेखनीय है. यह परंपरा रामायण, महाभारत, रघुवंश, कुमार-संभव जैसे महाकाव्यों में भी मिलती है.

लिरिक विधागत गीतिकाव्य मेघदूत कालिदास की प्रथम सफल रचना है जो लिरिक काव्यों में मूर्धन्य है. आषाढ़ के पहले दिन कालिदास ने जब आकाश पर मेघ उमड़ते देखे तो उनकी कल्पना ने उड़ान भर कर उनसे यक्ष और मेघ के माध्यम से विरह व्यथा का वर्णन करने के लिये मेघदूत की रचना कर डाली.

तू न झुके, बिरहि जनों के करूँ अश्रु जल,
रुक जा रे एक पल,
दूर दूर मेरा देश, जहां बिखराए केश,
बिरहन का बनाए वेश, पियामेरी विदेश, कैसे कटे कलेश,
उसे देना मेरा सन्देश रे. ओ आषाढ़ के पहले बादल.

यही लिरिक धारा वीरगाथाकाल या आदिकाल में प्रवाहित रही. उदाहरणार्थ चन्दबरदाई कृत पृथ्वीराज रासो में पृथ्वीराज चौहान को युक्तिपूर्ण सन्देश निम्नलिखित पद के माध्यम से दिया गया :

चार बांस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान,
ता पीछे सुल्तान है, मत चूके चौहान ।

इसी काल में अमीर खुसरो की रचनाएं भी उल्लेखनीय हैं. एक प्रचलित प्रसंग है कि एक बार वे एक कुँए के पास से गुज़र रहे थे, जहां चार स्त्रियाँ पानी भर रही थीं. उन्होंने जब पीने के लिये पानी माँगा तो प्रत्येक स्त्री ने उनसे अलग-अलग विषयों (खीर,चरखा, कुत्ता व ढोल) पर कविता की फरमाइश की. अमीर खुसरो ने एक ही पद में चारों विषयों का समावेश कर दिया:

खीर बनाई जतन से, चरखा दिया चलाय,
आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजाय ।

सूफी-संतकालीन युग में जयदेव के गीत-गोविन्द और विद्यापति की भावुक व मधुर पदावलियों में भी यही परंपरा दृष्टिगोचर होती है. विद्यापति की पदावली का एक दोहा अनुप्रास व ध्वन्यालंकार के उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है:

घन घन घनन घुँघरू कत बाजय, हन हन कर तुअ काता,
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक, पुत्र बिसरु जनु माता ।

यही छंदात्मकता, अलंकारिता और सौन्दर्यात्मकता, भक्ति-कालीन कवियों, सूर, तुलसी, मीरा कबीर, नानक इत्यादि की भक्तिपरक रचनाओं में मिलती है. अपनी सरल गेयता के कारण ये कालजयी धार्मिक गीत घर-घर में गाए जाते हैं.
इसके पश्चात् आए रीतिकाल के प्रमुख कवि बिहारी, सेनापति, रत्नाकर के गीत और पदावलियाँ भी बहुत लोकप्रिय हुईं. बिहारी की एक प्रसिद्द रचना सतसई के दोहे के बारे में लिखा गया है:

सतसैया के दोहरे, ज्यों नाविक के तीर,
देखन में छोटे लगें, घाव करें गंभीर

इसी तरह सेनापति की ऋतु-वर्णन वाली रचनाएं तो हिंदी साहित्य को अनुपम देन हैं.

छायावादी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पन्त, महादेवी वर्मा और डा.रामकुमार वर्मा तो अपनी रचनाओं में गीतात्मकता के लिए ही जाने जाते हैं. इनकी कविताओं के कुछ अंश प्रस्तुत हैं:

स्तब्ध ज्योत्सना में जब संसार
चकित रहता शिशु सा नादान
विश्व के पलकों पर सुकुमार, विचरते हैं जब स्वप्न अजान,
न जाने नक्षत्रों से कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन. (पन्त)

अभी न होगा मेरा अंत,
अभी अभी ही तो आया हूँ
मेरे मन में म्रदुल बसंत
अभी न होगा मेरा अंत. (निराला)

मधुर मधुर मेरे दीपक जल
युगयुग, प्रतिदिन, प्रतिक्षण, प्रतिपल,
प्रियतम का पल आलोकित कर. (महादेवी).

नील गगन में उड़ती उड़ती
विहग बालिका सी किरनें,
स्वप्न लोक को चली थकी सी,
नींद सेज पर जा गिरनें i (प्रसाद)

शिशिर कणों से लदी हुई,
कमली के भीगे हैं सब तार,
चलता है पश्चिम को मारुत,
लेकर शीत कला का भार i (रामकुमार वर्मा).

अधुनातन काव्य का युग बच्चनजी, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, नवीन, दिनकर, शिवमंगलसिंह सुमन आदि के गीतों का रहा. बच्चनजी के हालावाद ने और उनके समकालीन कवियों नेपाली, नीरज, वीरेंद्र मिश्र, रामावतार त्यागी, रवीन्द्रभ्रमर, इत्यादि ने गीत को भविष्यगत स्थायी अमरत्व प्रदान किया.
इसके बाद पिछले कुछ दशकों से प्रगतिवादियों द्वारा लयहीन गद्य-कविता को बढाने की मुहिम से प्रभावित अकविता, नईकविता, मुक्तछंद, नवगीत, अगीत, प्रगीत इत्यादि के नाम से गीत रचे जाते रहे हैं. लेकिन नाम कुछ भी हो गीत तो गीत ही है और आधुनिक साहित्य की लोकप्रिय विधा है.

संगीत की द्रष्टि से, संगीत के दो मुख्य भेदों, गान्धर्व व गान में, गीत गान के अंतर्गत आते हैं जो कि देशी प्रकृति के होते हैं और जिनका उद्देश्य जन-चित्तरंजकता है. गीत शब्द से ही गाया हुआ (अर्थात् कविता की स्वरमयी अभिव्यक्ति) स्पष्ट है. यह गायन का एक वह प्रकार है जिसका आधार स्वर-समुदाय होता है. गीतों में आध्यात्मिक, श्रंगारिक, साहित्यिक और अन्य सभी प्रकार के विषयों से सम्बंधित गेय कविताओं का ही प्राधान्य रहता है. संगीत में काव्य का सम्बन्ध पद से एवं राग व ताल का संबंध क्रमश: स्वर व ताल से है एवं इनमें निबद्ध लगभग सभी गेय-रचनाएँ, गीत की श्रेणी में आती हैं.

मनोविज्ञान की द्रष्टि से गीत आत्म-मंथन से उपजा हृदय का एक ऐसा स्वाभाविक व संवेदनात्मक प्रकटीकरण है जो मानव मन के संवेगों और मनोभावों को साहित्यिक, सांगीतिक और श्रंगारिक रूप से अभिव्यक्त कर सके. जब गीत जन्म लेता है तब मन की पीड़ा को व्यक्त करने के लिये विस्तार स्वत: मिल जाता है. हृदयपटल पर अंकित भाव अक्षर बनकर कागज़ पर

अंकित हो जाते हैं. छंदों की अभिव्यक्ति की लय मिल जाती है और शब्दों के सहज सुखद संयोग से गीत बन जाते हैं. हृदय के अव्यक्त विचार, भावों के साथ गीत के द्वारा सशक्त हुए व्यक्त होने लगते हैं और यही विचार डाकू बाल्मीकि को कवि बना देने की क्षमता रखते हैं

वियोगी होगा पहला कवि ,आह से नकल होगा गान
निकलकर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान.

साधारणतः गीत वैयक्तिक अनुभूति पर इतना आश्रित है कि अलौकिक आत्म-समर्पण हो या लौकिक स्नेह-निवेदन, तात्कालिक उल्लास-विषाद हो या शाश्वत सुखों-दुखों की अभिव्यंजना, प्रक्रति का सौंदर्य-दर्शन हो या इस सुंदरता से चैतन्य का अभिनंदन, सबको व्यक्ति अपनी गेयवाणी में व्यक्त करता है. इस गीतोत्पत्ति से उसे अतिरेक आनंद की प्राप्ति होती है.

समाजशास्त्र की द्रष्टि से गीत जनमानस की अनुभूतियों और संवेगों को प्रदर्शित करने का अत्यंत प्रभावशाली और सशक्त माध्यम तो है ही, साथ ही साथ, समाज के लिए मनोरंजन का सरल और सुलभ साधन भी है. गीतों का रसास्वादन कर पाठक, श्रोता और गायक सत,चित और आनंद की अनुभूति करते हैं.

पिछली शताब्दी में चित्रपट नामक दृश्य-श्रव्य विधा के आविष्कार और उसमे गीत-संगीत की अनिवार्यता, उपयोगिता एवं मनोरंजकता होने के फलस्वरूप चित्रपट अत्यंत लोकप्रिय हुआ है. आजकल जनसाधारण के मानस में चित्रपट संगीत इतना रच-बस गया है कि फ़िल्मी गीत ही गीत शब्द का पर्याय हो गया है. इसका कारण है, इन गीतों की सर्वसाधारण विशेषताएं, उदाहरणार्थ उनका साधारण बोलचाल की भाषा में रचित होना, सुगम गेय रागों व लोकधुनों में निबद्ध होना, आम आदमी की ज़िन्दगी में व्याप्त सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, संयोग-वियोग जैसे मनोभावों और अनुभूतियों को हृदयस्पर्शीय ढंग से प्रदर्शित करना, इत्यादि; और ऐसी विशेषताओं से परिपूर्ण गीत ही सामान्यत: लोकप्रिय होते हैं. यह बात कालजयी साहित्यिक रचनाओं एवं पुराने चित्रपट गीतों (विशेषकर बोलती फिल्मों के युग से फिल्म संगीत के स्वर्ण-युग तक के गीतों) में अधिक लागू होती है.समाज के विभिन्न वर्गों द्वारा आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी इसी प्रकार के लोकप्रिय गीतों की ही प्रधानता होती है.

परिवर्तनशीलता के शाश्वत सत्य को स्वीकार करते हुए देखें तो हम पाते हैं कि सामाजिक व्यवस्था के बदलाव के साथ-साथ इस बहु-आयामी विधा में भी परिवर्तन होते रहे हैं और यह वैदिककाल से लेकर आज तक के गीतों में यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है.प्राचीन

गीतों में पारंपरिक भावनाओं को व्यक्त किया जाता था, आज के गीतों में निर्वैयक्तिता का समावेश हो गया है.व्यक्ति तो सम्मुख होता है पर वह समाज का अंग होता हुआ सामाजिक परिवेश में अपने दुःख-दर्दों को लेकर आता है.पारंपरिक गीतों में परकीय पीड़ा-वेदना व अभिव्यंजना होती थी जबकि आज के गीतों में स्वकीय पीड़ा-वेदना व प्रेम की अभिव्यंजना होती है.इस प्रकार इस वातावरण का समाजीकरण होता चला गया है और यह भाव-सत्य आधुनिक काल के गीतों में व्यक्त हो रहा है.

बहरहाल,परिस्थितियां कुछ भी हों,नाम भी चाहे नवगीत,अगीत,अतिगीत,प्रगीत हो, गीत तो गीत है. गीत एक चिरन्तर बहु-आयामी विधा है जो अनंतकाल तक इसी रूप में चिर-स्थायी रहेगी.

सन्दर्भ ग्रन्थ -

1. आधुनिक हिंदी कविता में गीत तत्व - सच्चिदानंद तिवारी, हिंदी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग, 1964
2. भारतीय काव्य सिद्धांत - डॉ. नागेन्द्र और डॉ. बाली, हिंदी कोष, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1969
3. गीत पर्व - सतीश गुप्ता, शब्दोत्सव, यशोदानगर, 2014